CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

[illegible]आनन्दभाष्यकार जगद्गुरु श्री रामानन्दाचार्यपीठाचार्य

जगद्गुरु श्री रामानन्दाचार्य-राम प्रपन्नाचार्य

योगीन्द्र प्रवर्तित विश्राम द्वारकास्थ श्री [illegible]मठ संचालित.

ज.गु.श्री रामानन्दाचार्य-पीठ

सचित्र धार्मिक मासिक

संरक्षक- शेठ श्री अमरसी कुरजी मजिठिया

सम्पादक- स्वामी [illegible]श्वरानन्दाचार्य

सहसम्पादक- पं. शरच्चन्द्र शास्त्री

स्वात्यां कुजे शैवतिथौ तु कार्तिके
कृष्णेऽञ्जनागर्भत एव मेषके ।
श्रीमान् कपीट् प्रादुरभूत् परन्तपो
व्रतादिना तत्र तदुत्सवं चरेत् ॥
(जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्याः)

कार्यालय: श्रीकोसलेन्द्र मठ, सरखेज रोड, पालडी,
अहमदाबाद-३८०००७

वर्ष ५ विक्रमाब्द २०४० अंक ९

श्रीरामानन्दाब्द ६८३ १ नवम्बर १९८३

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

दीपावली-नूतनवर्षोप लक्ष्य में

नवे वर्षे सौम्ये भवतु भवताङ्गोर्निरतुला,
वपुः स्वास्थ्यं श्रेयः श्रयतु सततं श्रीपति-
जुषाम्। विरोधं हित्वा श्रीः सह वसतु
वाण्या शुचिकुले
रतिर्भूयाच्छश्वद्रघुपतिपदे मङ्गलकरे ॥

जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्य रामप्रपन्नाचार्यजी योगीन्द्र
आनन्द भाष्यकार जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्य पीठ
शंकुधारी-वाराणसी १० का शुभाशीर्वाद

Nepal Sanskrit University Valmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

१० २६
१८
२८

श्री रामानन्द सम्प्रदाय के ३९ वें आचार्य
जगद्गुरु श्री रामानन्दाचार्य रघुवराचार्य
जयन्ती महोत्सव

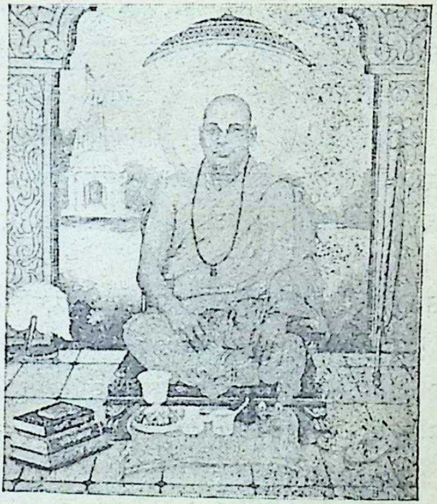

दि० ७-१०-८३ शुक्रवार से दि० १६-१०-८३ रविवार

श्री रामानन्द सम्प्रदाय के महामुनि महामहोपाध्याय जगद्गुरु श्री रामानन्दाचार्य रघुवराचार्यजी वेदान्त केशर जी की अवतार तिथि आश्विन शुक्ला दशमी विजया दशमी है। आचार्य जी की जयन्ती विशेष समारोह के साथ मनाई

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

जाती है । इसी उपलक्ष्य में विश्राम द्वारिकास्थ पश्चिमाम्नाय श्री रामानन्दाचार्यपीठ शेषमठ में श्री रामचरित मानस पारायण प्रवचन दि० ७-१०-८३ से १६-१०-८३ तक हुआ व्यास पीठ पर गोसन्त प्रतिपालोक जगद्गुरु श्री रामानन्दाचार्य जी के कृपापात्र स्वामी रामेश्वरानन्दाचार्य जी विराजमान होकर भक्ति रसमय शैली में श्री रामचरित मानस का ज्ञानामृत पीलाया आसपास के हजारों ग्रामीण जनता ने उसका लाभ उठाया कथा समाप्ति के दिन गाँव के समस्त बालक गण एवं श्री गोपाला सत्संग मंथल के माता व भाई बहन सभी को भगवत्प्रसाद सेवन कराया गया ।

इस वर्ष भी प्रति वर्ष की तरह यह जयन्ती महोत्सव सम्पन्न हुआ श्रोताजन की संख्या में अधिक वृद्धि रही । तीर्थ स्थल भक्तिमय वातावरण में डूब गया सभी के मुख से निकले श्री राम जय राम जय जय राम के दिव्य ध्वनि से आकाश मडंल गुञ्जायमान हो गया ।

ता० १६-१०-८३ रविवार को एकाह श्री राम याग के आयोजन ने समस्त प्रदेश में यज्ञ मय वातावरण बना दिया है । इस श्री रामानन्दाचार्य पीठ की यही खूबी है कि वर्ष में कम से कम दो वार श्री राम याग का आयोजन होता है ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

विश्राम द्वारिका में श्री रामार्चा महापूजा

यों तो इस तीर्थ में कोई न कोई सत्कर्मानुष्ठान होता ही रहता है तथापि पर्वों में विशेष रूप से आयोजन होता है। शरद पूर्णिमा के उपलक्ष्य में ता॰ २१–१०–८३ शुक्रवार को विश्राम द्वारिका में श्री रामार्चा महापूजन का आयोजन किया गया था। आचार्य के रूप में श्रीरामानन्दाचार्य पीठाधीश स्वामी रामेश्वरानन्दाचार्य जी विराजे थे। कथा श्रावणार्थ भाविक जनों से पीठ का सभा मण्डप खचाखच भर गया था। श्री रामार्चाका विशिष्ट महत्व तथा लोकोत्तर प्रभावकारी कथा सुनकर लोग आश्चर्यचकित हो गये।

संसृतिचक्र और तत्परिहारोपाय

ले॰ नित्यपार्षद जगद्गुरु श्री रामानन्दाचार्य रघुवराचार्य जी

क्रमागत अ॰ ८ पृ॰ ११ से आगे

इस चक्र से निकलनेके लिये, अथवा बचनके लिये उपाय, सद्विचार, वैराग्य, भक्ति और भगवत् शरणागतिके अतिरिक्त अन्य कोई नहीं है सद्विचार वह है जिससे जीवको स्वस्वरूप और परस्वस्वरूपका अनुभव होता है। इसके लिये महोपपुराण पद्में एक कथा है। निदाघ नामके मुनिपुत्रने समस्त विद्यायें प्राप्त करके पिताकी आज्ञासे साढेतीनकरोड़ तीर्थोंमें स्नान और पर्यटन किया। और अनेक भुमिभागोंमे पुण्यसंचयके लिये

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

विचरहण किया। पश्चात अपने पिता ऋभुके पास आकर प्रणाम करके अपना मनोभाव कह सुनाया।

'सार्धत्रिकोटितीर्थेषु स्नानपुण्यप्रभावतः ।
प्रादुर्भूतो मनसि मे विचारः सोऽयमीदृशः ॥
जायते म्रियते लोको म्रियते जननाय च ।
अस्थिराः सर्व एवेमे सचराचरचेष्टिताः ।
सर्वापदां पदं पापा भावा विभवभूमयः ।

हे पितः! साढे तीन करोड तीर्थोंमे स्नान पुण्यके प्रभावसे मेरे हृदयमें यह विचार उत्पन्न हुआ है। जन्तु अपने कर्मके अनुसार इस संसारचक्रमें जन्म लेता है। और अवश्य मरता हैं जो मर गये वह कर्माधीन होनेके कारण जन्म अवश्य लेता है। इसी प्रकार सब भाव अस्थिर और नाशवाले प्रतीत होते हैं। इस संसारमें जोकुछ देखा जाता है वह सब चञ्चल है और सुख के अतिरिक्त अधिक दुःख ही देनेवाला है। इस दुःख शोकप्रद संसारमें अपनी सवारियां भी दुःखप्रद हैं।

युज्यते वेष्टनं वायोराकाशस्य च खण्डनम् ।
ग्रन्थनञ्च तरंगाणमास्था नायुषि युज्यते ॥

अर्थात् वायुका कदाचित् इकठ्ठा करके वेष्टन हो सकता है आकाशका शस्त्रसे खडन हो सकता है, समुद्रादि जलाशयोंकी तरंगोंका गूँथन हो सकता है। अर्थात् यह असं-

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

भव कार्य भी सम्भव कोटिमें आ सकते है परन्तु अपने इस शारीरिक जीवन पर अ स्था नहीं रक्खा जा सकती।

प्राप्यं सम्प्राप्यते येन भुपे येन च शोच्यते ।
परायाः निनतेः स्थायत्तज्ज वितमुच्यते ॥

तरवोऽपिहि जीवन्ति जीवन्ति मृगपक्षिणः ।
स जीवति मनो यस्य मननेनोपजीवति ।

जात स्त एव जगति जन्तवः साधु जीविताः ।
ये पुनर्नेह जायन्ते शेषा जठरगदभाः ।

भारोऽविवेकिनः शास्त्रं भारो ज्ञानं च रागिणः
अशान्तस्य मनोभारो भारोऽनात्मविद वपुः ।

अहंकारवशादापदहंकाराद्दुराधयः ।
अहकारवशादीहा नहंकारात्परो रिपुः ।

अर्थात् इस जीवनका प्रयोजन तो यही हैं कि जो प्राप्य वस्तु भगवान् श्रीराम हैं। उनको येन केन प्रकारेण प्राप्त करना इस विनश्वर जगत्में वृक्ष भी जीते हैं और मृग पक्षी भी जीवन विताते हैं परन्तु वास्तविक उसका ही जीवन जीवन है जो इष्ट वस्तुका मनन करता रहता है। इस जगत्में वही मनुष्य जन्मवाले कहे जा सकते हैं जो जन्म धारण करके फिर जन्म न धारण करना पडे। इसका पूर्ण यत्न करें। बाकी तो गर्भ गर्दभ हैं। विवेकी मनुष्यके लिये शास्त्र भार है रागी मनुष्यके लिये ज्ञान भार है अशान्त इन्द्रियवालेके लिये अपना मनभी भार है एवं अना-

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

त्मत्रिद् मनुष्यके लिये अपना शरीरभी भार है। जब इस देहसे स्वातंत्र्यादि अभिमान नहीं गया हो तब तक वह मनुष्य पापी है अहंकारसे बढकर कोई रोग नहीं है अहंकारसे ऐहिक कामनाये उत्पन्न हुआ करती हैं। और अहंकारसे बढकर दूसरा शत्रु भी नहीं है।"

निदाधके इस प्रकार सद्विचारयुक्त वचन सुनकर ऋभुने उत्तम धिकारी जानकर परस्वरूपका उपदेश दिया। यह सद्विचार मोक्षसाधनमें सर्व प्रथम साधन माना जाता है। बाकी शम, सन्तोषादि सब इसके सहचारी हैं उन सबका भी सद्विचार के अन्तर्भाव जान लेना चाहिये। कहा भी है कि,

मोक्षद्वारे द्वारपालश्चत्वारः परिकीर्तिताः।
शमो विचारः सन्तोषश्चतुर्थः साधुसंगमः।
एकं वा सर्वयत्नेन सर्वमुत्सृज्य संश्रयेत्।
एकस्मिन् वशगे यान्ति चत्वारोऽपि वशंगताः।

तात्पर्य यह है कि मोक्षद्वार पर शम सद्विचार, सन्तोष, और साधुसमागम यह चारों द्वारपाल हैं अर्थात इनको प्राप्त किये विना मोक्ष प्राप्त करना असंभव हैं इसलिये मुमुक्षु जीव इन चारोंको अथवा इनमेंसे एकको प्रथम अपने वश में करें। एक का अच्छी प्रकार वश होने पर शेष तीन भी वशीभूत हो जावेंगे। यह प्रथम उपाय 'सद्विचार' का निरूपण किया गया। दुसरा उपाय

Nepal Sanskrit University Valmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

वैराग्य है। मोक्ष भिलाषी प्राणी के लिये 'वैराग्य' एक अत्यावश्यक साधन हैं जिस तत्त्व जिज्ञासु जन के हृदय में वैराग्य भानु की प्रभा चमक रही है उसके हृदय में राग, मोह द्वेष आदि रूप अंधकार नहीं रह सकता है वह वैराग्य अपने देह गेह और सम्बन्धियों के साथ करना यह ऐहिक वैराग्य माना गया है। परलोक के दिव्य भोग विलासों की तृष्ण छोड़ना यह आमुष्मिक वैराग्य माना जाता है। मुमुक्ष जीव के लिये इस देह में नीचत्वानुसंधान करना परमावश्यक है। लिखा है कि

स्तोकेनान दमाय ति स्तोकेनायाति खेदताम्।
नास्ति देहसमः शोच्यो नीचो गुणविवर्जितः।
तडित्सु शरदभ्रेषु गन्धर्वनगरेषु च।
स्थैर्यं येन विनिर्णीतं सविश्वसितु विग्रेह।

यह देह बहुत स्वल्प सुख के कारण आनन्द को प्राप्त हो जाता है। और दड़े ही दुख के कारण से खेद को प्राप्त हो जाता है इसलिये देह के समान अन्य कोई सोंच करने योग्य नहीं है एवं देह नीच और गुण रहीत भी है। जिस पुरुष ने घनघोर घटाओं में चमकती हुई विद्युत में शरत्कालिन मेघ मण्डल में और गन्धर्व नगर में स्वकीय उपयोग के योग्य स्थिरता का निश्चय किया हो वह इस तुच्छ देह में भी स्थायित्व का विश्वास करे। आशय यह है कि यह देह क्षण भंगुर है। इसको स्थायी मानना बड़ी भयंकर भूल है। इसी प्रकार देह में प्राप्त होने वाले शैशव बाल्य

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

योवन और वार्धक्य आदि स्वरूप भाव भी दोष पूर्ण हैं। मनः प्रमाद के कारण नहीं हैं शिशु अवस्था में पढनेवाले गुरु से माता से, पिता से और बडे सहचारी वर्गों से निरंतर भीति बनी रहती है इसलिये शैशव भय का स्थान है। युवावस्था में अपने शरीर में ही स्थित काम पिशाच से महात्रास है। एवं वृद्धावस्था मे स्त्री पुत्र नोकर और स्वजन बन्धु आदि निरन्तर उपहास करते है अतः वह अवस्था ही दुःखदायी है। इस प्रकार स्वशरीर और शरीर विलासिनी सब अवस्थाओं से अरम्यता के कारण मन हटाकर विरक्त बनने में ही सुख है। दैवमाया स्त्री भी केवल आपात रम्य है ठाक ठीक विचार करने से वह जगत रूप गर्त मे डालने के और उस गर्त में ही पडे सडते रहने के लिये पीत स्नेह रंगरजित लोहमयी दृढ श्रृंखला है। इस नारी रूप माया ने भगवत्सन्मुख होते हुए जीव को ऐसा भटका दिया है कि वह प्रभु से सहस्रों कोश दुर हो गया है। अतः इस माया से विरक्ति करना ही वास्तविक वैराग्य है। ठीक ही सास्त्रों में कहा गया है कि

जन्मपल्वलमत्स्यानां चित्तकर्दमचारिणाम्।
पुंसां दुर्वासनरज्जुर्नारीबडिशपिण्डिका।
कनकनाम्नाकिरतेन विकीर्णा मुग्धचेतसः।
नार्यो नरविहंगानामंगबंधनवागुरा।

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

अर्थात् जन्म रूप अल्प जलाशयवासी और चित्त कोचड़ में विहरणशील पुरुष मत्स्यों के लिये दुर्वासना रूप दृढरज्जू से बँधी हुई यह नारी मत्स्यमोहक बड़ी बडिशपिण्ड है।

इसी प्रकार कामकरान्तार में फैलाई गई नर पक्षियों के अङ्गो को जकड़ लेने वाली नारीरूप सुदृढ़ वांगुरा (बन्धन फाँस) है। अतः इस मोहमयी स्त्री रूप माया से वैराग्य होना अत्यावश्यक है। इससे दुर रहने वाले तपस्वियों के इस प्रकार उद्गार सुने जाते हैं।

सर्वेषां दोषरत्नानां सुसमुद्गिकयाऽनया।
दुःखश्रृंखलया नित्यमलमस्तु मम स्त्रिया।

तात्पर्य यह है कि समस्त दोषरत्नों के लिये यह स्त्री एक बड़ी भारी मंजूसा है। अतः इस दुःख श्रृंखला रूप स्त्री से मैं पूर्णतया उपरम पाचुका हूँ। यह सब अनर्थों का मूल है। इस वैराग्य से पर वैराग्य की उत्पत्ति होती है। और पर वैराग्य से भगवान के भजन में एकाग्रता मिलती है। परन्तु वैराग्य साधन तभी सफल होता है जब उसका बहुत दृढता के साथ बारंबार अभ्यास किया जावे, और दृढ अभ्यास होने पर ही इस अभ्यास युक्त वैराग्य फल मनो जय होता है। अन्यथा नहीं अतः योग सूत्र में मनोजय के लिये इन दोनों साधनों की आवश्यकता बतायी है। 'अभ्यास वैराग्याभ्यां तन्निरोधः' अर्थात् अभ्यास और वैराग्य से मनका निरोध होता है। तात्पर्य यह है कि

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

मोक्ष के लिये प्रयतमान अधिकारी जन को किसी भी उपाय से मनोजय संपादन करना चाहिये। शास्त्रों में स्पष्ट लिखा है कि—

हस्तं हस्तेन संपीड्य दंतैर्दन्तान्विचूर्ण्य च।
अङ्गान्यंगैः समाकृष्य जयेदादौस्वकंमनः।
मनसो विजयान्नान्यद् गतिरस्ति भवार्णवे।

अर्थात् हाथ से हाथों को दांत से दांतों को और अन्य अंगो से अंगो को सुदृढ दवाकर भी मनको प्रथम जीतना चाहिए क्योंकि इस मनके जीतने के अतिरिक्त अन्य कोई उपाय इस भवार्णवके तरनेका नहीं है। अतः वैराग्य से प्रथम मनो निरोध करना चाहीये। मनोजय का फल है तृष्णा क्षय। वह स्वयं हो जावेगा। इस प्रकार सद्विचार और वैराग्य परायण जो मुमुक्षु पुरुष होगा उसके हृदय में शुद्ध भक्ति उत्पन्न होगी। क्योंकि अन्य समस्त साधन उपर्युक्त इन दो में ही अन्तर्भूत हो जाते हैं। और इन्हीं साधनों में आचार्योपसत्ति, तथा आचार्य सेवा का भी अन्तर्भाव है। आशय यह है कि आचार्य सेवा के विना कोई भी अर्थ सिद्ध नहीं होता। अत एव सिद्धान्त में सत्सम्प्रदायनिष्ट आचार्य से संप्रदाय पद्धति के अनुसार प्राप्त हुआ जो उपदेश वही कल्याण प्रद होता है। छान्दोग्योपनिषद् में स्पष्ट लिखा है कि "आचार्याद्ध्येव विद्या विदिता साधिष्टं प्रापयति" 'आचार्यस्तु ते गतिंवक्ता' 'आचार्यवान् पुरुषो वेद' इन अनेक श्रुतिओं से यह सिद्धान्त निष्पन्न हुआ कि आचार्य अर्थात् गुरु के संप्रदायपूर्वक उप-

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

देश से ही साधनान्तरों के अनुष्ठान में सौलभ्य होता है। ऊपर में चार साधनों का वर्णन किया है। इन चारों में गुरूपदेश का विशेष रूप से उल्लेख नहीं आया। अतः उसका मोक्ष में उपयोग नहीं होगा? यह आशंका किसीको न हो जावे इसलिये यहाँ यह आवश्यकीय विवेचन किया गया। प्रथम साधन सद्विचारमें ही उसका अन्तर्भाव है। सद्गुरु समाश्रयण के विना और उनके मोहनाशक उपदेश के विना कैसा भी उच्च भावनावाले अधिकारी क्यों न हो सद्विचार परायण नहीं हो सकता और सद्विचार साधन प्रथम वर्णित है। अतः गुरु प्रसत्ति के अन्तर ही सद्विचार साधन पूर्ण साधन माना जाता है। यहां पर इतना और ध्यान रखना आवश्यक है कि श्री गुरु की उपसत्ति एकवार करके पश्चात् कृतकार्य हो जाना यह ठीक नही गुरु (आचार्य) परायण तो आजीवन वने रहना चाहिये। गुरु के अधीन ही शिष्य की समस्त क्रियायें हों तभी वह मोक्ष का अधिकारी कहा जा सकता है। इस प्रकार सद्विचार और वैराग्य साधनों के पालन कर लेने पर तृतीय साधन भक्ति है। यह साधन भगवत्प्राप्ति रूप मोक्ष का प्रधान साधन है। त्रिपाद्विभूति महानारायणोपनिषद् में लिखा हैं कि, "तस्मात्सर्वेषमधिकारिणामनधिकारिणां भक्तियोग एव प्रशस्यते। भक्तियोगो निरुपद्रवः। भक्तियोगान्मुक्तिः बुद्धिमतामनायासेनाचिरादेव तत्त्वज्ञानं भवति। तत्कथमिति। भक्तवत्सलः स्वयमेव सर्वेभ्यो मोक्षविघ्नेभ्यो भक्तिनिष्ठान् सर्वान्परिपालयति सर्वान्परिपालयति सर्वाभीष्टान्प्रयच्छति।"

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

"कारणेन विना कार्यं नोदेति भक्त्या विना ब्रह्मज्ञानं कदापि न जायते। तस्मात्त्वमपि सर्वोपायान्परित्यज्य भक्तिमाश्रय। भक्तिनिष्ठो भव भक्तिनिष्ठो भव। भक्त्या सर्वसिद्धयः सम्भवन्ति भक्त्याऽसाध्यं न किञ्चिदस्ति"

उपर्युक्त इस श्रुतिका अर्थ स्पष्ट ही है। इसलिये आर्थिक विवेचन करके ग्रंथ बढ़ने की आवश्यकता नहीं है साक्षात् वेद में भक्ति का इस प्रकार महत्व है। वेदपुराण और पूर्वाचार्यों के सिद्धांत से तो यही निष्कर्ष प्राप्त होता है कि, भक्तियोग से बढकर अन्य कोई सुगम मार्ग मोक्ष प्राप्ति के लिये नहीं है। श्रीमद्भागवत २।२। में स्पष्ट लिखा है कि,

नह्यतोऽन्यः शिवः पन्थाः विशतः संसृताविह।
वासुदेवे भगवति भक्तियोगो ततो भवेत्॥

अर्थात् इस संसृतिचक्र में प्रविष्ट मनुष्य के लिये भगवान् वासुदेव श्रीराम के चरणों में भक्तियोग से बढकर दूसरा कोई श्रेष्ठ मार्ग नहीं है। वह भक्ति है क्या वस्तु इसका विचार यहाँ अति सक्षेप में लिखा जाता है। विस्तार से वर्णन देखना हो तो हमारे अन्य संस्कृत अथवा भाषा ग्रन्थों में देखना चाहिये। भक्ति का स्वरूप पूर्वाचार्यों ने अच्छी प्रकार से अपने अपने ग्रन्थों में दिखाया है भक्ति शब्दवाचक और लक्षक दोनों प्रकार से शास्त्रों में व्यवहृत है। अत एव—

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

श्रवणं कीर्तनं विष्णोः स्मरणं पादसेवनम् ।
अर्चनं वन्दनं दास्यं सख्यमात्म निवेदनम् ।

इस प्रकार जो नवधा भक्ति कही जाती हैं उसकी भी उपपत्ति होती है । इस नवधा भक्ति में अन्तिम नवम भक्ति ही भक्ति शब्द का मुख्य अर्थ है ऐसा कितने एक आचार्योंका मत है । कुछ विद्वान् क्रिया मात्र को भक्ति शब्द से पुकारते हैं । परन्तु केवल क्रिया (कर्म) को भक्ति नहीं कह सकते । क्योंकि तन्मयता को प्राप्त अनुरागी भक्त कोई क्रिया न करने पर भी भक्ति संपन्न कहे जाते हैं । भक्ति का फल मोक्ष है इसको समस्त शास्त्र स्वीकार करते है । और क्रिया अर्थात् कर्म को मोक्ष प्रयोजकता नहीं है यह स्पष्ट ही "न कर्मणा न प्रजया धनेन" इस श्रुति में कहा गया है । इसी प्रकार केवल ज्ञान, अथवा योग को भी नहीं कहा जा सकता । कारण कि—

तस्मान्मद्भक्तियुक्तस्य योगिनो वै मदात्मनः ।
न ज्ञानं न च वैराग्यं प्रायः श्रेय भवेदिह ।

श्री भागवत के इस वाक्य में केवल ज्ञान वैराग्य को भक्ति से न्यून बताया है । यहां पर यह विस्मृत न होना चाहिये कि ज्ञान शब्द अनेक स्थलों में भक्ति के रूप में भी व्यवहृत हुआ है परन्तु इस भागवतीय श्लोक में भक्त्याभिधया ज्ञान पद नहीं है । यहाँ ज्ञान पद से केवल

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

मानस धर्म जान लेना चाहिए । अतः यह ज्ञानभक्ति की समता नहीं पा सकता । इन सबसे अतिरिक्त ही भक्तिका स्वरूप है । वह है "स्वकीय इष्टदेव श्री रामचन्द्रजी महाराज के विषय में निरतिशय अनुराग इसी अनुराग को 'सापरानुरक्तिरीश्वरे' इस सूत्र से महर्षि शाण्डिल्यने भक्ति शब्द का मुख्य अर्थ माना है । भाष्यकार ने भी 'परमेश्वर विषयकान्तः करणवृत्तिविशेष एव भक्ति" इस प्रकार प्रभु विषयक हार्दिकराग विशेष को ही भक्ति माना है । इसी प्रकार अन्य आचार्यों ने "व्यक्ति भगवद्भगवदाकारतारूपरसाख्यः स्थायी भावः परमानन्दसाक्षात्कारात्मकः प्रादुर्भवति स एव भक्तियोग इति तं निरतिशयं पुरुषार्थं वदन्ति रसज्ञाः" यह भी भक्ति का स्वरूप बताया है । इसकी समर्थिका यह सूक्ति भी है—

द्रुतस्य भगवद्धर्माद्धारावाहिकतां गता ।
सर्वेशे मनसो वृत्तिर्भक्तिरित्यभिधीयते ।

अर्थात् अनवरत अपने इष्टदेव भगवान श्री रामचन्द्रजी की कथा तथा उनके गुणों का वारम्वार स्मरण करने से हृदय द्रवीभूत होता है । क्योंकि चित्त पदार्थ लाख के समान है जिस प्रकार लाख, अग्नि आदि तापक वस्तु के संयोग से द्रवित हो जाता है ठीक इसी प्रकार चित्तसत्व भी तापक विषय के संयोग से द्रुतभाव को प्राप्त हो जाता है । यही कहा भी है कि—

क्रमशः

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

अर्थपञ्चकम्

क्रमांगत–अं. ८ टा. पे. ४ से आगे

स्थूल सूक्ष्मकारणतो भिन्न कोषाच्च पंचकात्
जाग्रत्स्वप्नाद्यवस्थानां साक्षिभूतं तु सर्वदा ॥ ७ ॥
चिदानन्दमयं नित्यं दिव्यविग्रह संयुतम् ।
अखण्डैकरसञ्चैव किशोरे वयसि स्थितम् ॥८ ॥
द्विभुजं सत्वसंपन्नमीशसेवाप्रयोजनम् ।
प्रभो र्नियाम्यं शेषत्वं ज्ञातव्यं स्वस्वरूपकम् ॥९॥

मुमुक्षुको अपना स्वरूप इस तरह जानना चाहिये,, कि मेरा स्वरूप माया रचित स्थूल सूक्ष्म कारण तीनों शरीर से भिन्न है, और अन्न मयादि पञ्च कोषो से भी भिन्न है जाग्रत स्वप्नादि अवस्था का सर्वदा साक्षीभूत है, तथा चिदानन्दमय और नित्य है दिव्यविग्रह से संयुक्त है अखण्ड एक रस और किशोरावस्था में स्थित है, द्विभुज है सत्वसम्पन है अपने ईश की सेवा ही उसका प्रयोजन है, और प्रभु का नियाम्य तथा शेष है, इस प्रकार अपने स्वरूप को जानना चाहिये, अर्थात् पञ्चमहाभूत पृथ्वी, अप, तेज, वायु आकाश तथा पञ्च तन्मात्रा, शब्द रूप रस गन्ध दश इन्द्रिय श्रोत्र त्वक चक्षु जिह्वा, घ्राण, ये पांच-पांच ज्ञानेन्द्रिय और वाक् पाणि, पाद, पायू उपस्थ, ये पाँच कर्मेन्द्रिय हैं, मन बुद्धि चित्त अहंकार चार अन्तः करण इन चौवीस तत्वों से रचा हुआ स्थूल शरीर है, और तथा मन बुद्धि और

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

दश इन्द्रिय और पञ्चप्राण प्राणा पान, उदान, व्यान समान इन १७ सत्रह तत्वों से युक्त सूक्ष्म शरीर है और केवल अविद्या मय कारण शरीर है, इन सबों से आत्मा भिन्न है तथा अन्नमय कोष मन मय कोष प्राणमय कोष, विज्ञानमय कोष आनन्द मय कोष इन पञ्चकोषों से भी आत्मा भिन्न है। यद्यपि विज्ञान मय और आनन्द मय आत्मा परमात्मा का स्वरूप कहा गया है पञ्च कोष रूप कहने से प्रकृति सम्बन्ध रहित आत्मा स्वरूप है, इसी कारण से यहाँ पञ्चकोष से भिन्न कहा है, और जाग्रत स्वप्न सुषुप्त ये तीनो अवस्थ बुद्धि की हैं, आत्मा उनको साक्षी भूत है। उन अवस्थावों का देखने वाला है, यद्यपि विश्व तैजस, प्राज्ञ रूप से आत्मा का ही वर्णन है तथापि यह कहना भी माया के सम्बन्ध का लेकर है, वस्तुतः आत्मा सर्वदा साक्षी भूत है 'और चिद्रूप आनन्द मय तथा त्रिकालबाध्य होने से नित्य है, अर्थात् आत्मा उत्पत्ति विनाश का प्रतियोगी नहीं है भाव न आत्मा। उत्पत्त है न विनाश हैं। इसी से नित्य कहा, और विग्रह संयुक्त है। भक्त लोग सदा ही आत्मा को दिव्य विग्रह संयुक्त मानते है, यद्यपि, "बालाग्र शतभागस्य" इत्यादि वचनों से आत्मा का अणुरूप प्रतिपादन किया गया है. तथापि भक्त लोगों का मंतव्य ऐसा ही है, कि वे अपने भावानुसार ही आत्मा के स्वरूप को मानते है, और अखण्ड एकरस है, किसी कारण से उसको

(शेष टाइटल ३ पर)

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

अन्वयः—अङ्के निवेशितविदेहकुमारिकाणाम् लङ्केशदारललितासहसायकानाम् आसारवाहिकरुणाभृदपाङ्गितानाम् कासाम् अपि भासाम् प्रपदनम् कलयामि ॥१२८॥

गोद में श्रीसीताजी को बैठाने वाली रावण की स्त्री के विलास का असहिष्णुसायकवाली धारासम्पात की वहनशील-दयायुक्तदृष्टिवाली किसी विलक्षण प्रभा का श्रीरामरूपदिव्यतेज-का मैं आश्रयण करता हूँ ॥१२८॥

नहि तन्न करोमि यन्निषिद्धं
विहितं यद्यपि कर्म नाऽऽचरामि ।
धरणीदुहितुस्तथाऽपि नाथं
शरणीकृत्य कृतार्थतामुपैमि ॥१२९॥

अन्वयः—यत् निषिद्धम् कर्म तत् नहि करोमि-इति न यद्यपि विहितम् अपि न आचरामि; तथाऽपि धरणीदुहितुः नाथम् शरणीकृत्य कृतार्थताम् उपैमि ॥१२९॥

यद्यपि जो शास्त्र से निषिद्ध कर्म है; वह नहीं करता हूं ऐसा नहीं अर्थात् निषिद्धकर्म करता ही हूं, दो नञ् प्रकृत कर्थ का दृढता के बोधक होते हैं शास्त्रविहित सत्शास्त्रानुष्ठान भी नहीं करताहू तो भी अर्थात निषिद्धकर्माचरण तथा विहितत्याग करने पर भी श्रीसीतापति की शरणागतिस्वीकार कर कृतार्थता प्राप्त कररहा हूं ॥१२९॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

अयं शक्रादीनां गणमगणयित्वा दिविषदा-
मुपेक्ष्य स्वच्छन्दं द्रुहिणमनवेक्ष्य त्रिनयनम् ।
पदत्रस्यापि श्री रमृषिवधूकल्मषहरं
नमस्कारोऽस्माकं रघुपतिपदाब्जं मृगयते ॥१३०॥

अन्वयः–अयम् अस्माकम् नमस्कारः शक्रादीनाम् दिविषदाम् गणम् अगणयित्वा द्रुहिणम् स्वच्छन्दम् उपेक्ष्य त्रिनयनम् अनवे [पे] क्ष्य पदत्रस्यापि श्रीकरम् ऋषिवधूकल्मषहरम् रघुपति पदाब्जम् मृगयते ॥१३०॥

यह हमारा नमस्कार इन्द्रादिदेवों के गण की गणना नहीं कर और ब्रह्मा की अपनी इच्छानुसार उपेक्षा यानी त्याग कर और शिवजी की अनवेक्षा यानी अदर्शन वा अनपेक्षा यानी उपेक्षा कर पदत्रय के भी यानी तीन लोक के भी अथवा स्थानरक्षक के भी श्रीकर यानी शोभा वा सम्पत्ति के सम्पादक और गौतम ऋषि की पत्नी यानी अहल्या के पापों के हर्ता श्रीरामजी के चरण रूप कमल को खोजता है अर्थात् इतर समस्त देव से पूजित तथा नस्कृत होने से श्रीरामजी के श्रीचरण कोही मैं सर्वदा नमस्कार करता हूँ अन्य देव इस योग्य नहीं ॥१३०॥

प्रत्यग्राम्बुदजालनीलवपुषं पाणिस्फुरत्कार्मुकं
पार्श्वद्वन्द्वनिविष्टपत्न्यवरजं राजन्यमेकं प्रभुम् ।

Nepal Sanskrit University, Valmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

नेत्रश्रीनिगृहीतनीरदजलच्छायामदं मे मुदा
चेतः शीतमयूखशेखरधनुर्वोढारमाढौकते ॥१३१॥

मे चेतः प्रत्यग्राम्बुजनालनलवपुषम् पाणिस्फुरत्कार्मुकम् पार्श्वद्वन्द्वनिविष्टपत्न्यवरजम् राजन्यम् एकम् प्रभुम् नेत्रश्रीनिगृहीतनीरजलदच्छायामदम् शीतमयूखशेखरधनुर्वोढारम् मुदा आढौकते ॥ १३१ ॥

मेरा मन नवीन मेघ समूह के समान श्यामवर्ण शरीर वाले हाथ में विराजमान धनुष वाले दोनों बगल में और दक्षिण भाग में बैठे स्त्री और छोटा भाई यानी श्रीसीताजी और श्रीलक्ष्मणजी वाले क्षत्रिय वीर अद्वितीय प्रभु नयनों की शोभा से कमल और मेघों की छाया का गर्व गृहीत करनेवाले शिवजी के धनुष का वहन भंग करने वाले सर्व समर्थ श्रीरामजी के प्रति जाता है ॥ १३१ ॥

असुपवनभुजङ्गीभूतबाणमरीणां
निगमवनकुरङ्गी नीरदश्यामलाङ्गीम् ।
मदनतरलसीतामानसाम्भोजभृङ्गीं
कलयति हृदयं मे काममपि प्रेमभङ्गीम् ॥१३२॥

मे हृदयम् अरीणाम् असुपवनभुजङ्गीभूतबाणाम् निगमवनकुरङ्गीम् नीरदश्यामलाङ्गीम् मदनतरलसीतामानसाम्भोजभृङ्गीम् कलयति ॥ १३२ ॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

मेरा मन शत्रुओं की प्राण रूप हवा पीनेवाले असर्प होते हुये भी सर्पबने बाण वाली वेद रूप वन की हरिणी तथा मेघ के समान श्यामवर्ण अङ्ग वाली कामदेव से भी चञ्चल श्रीसीताजी के हृदय रूप कमल की भ्रमरी कोई प्रेम की भङ्गी यानी छटा को आकलन अर्थात् भजन-सेवा करता है ॥ १३२ ॥

ज्यावल्लिकारणवशाद् रघुवंशकेतोः
कर्णान्तमेष्यसि कदापि विकृष्यमाणा ।
देवे निवेदय तदा मम दौरवस्थं
धर्मश्रिताऽसि यदतः किल ते ब्रवीमि ॥१३३॥

ज्यावल्लि ! कारणवशात् विकृष्यमाणा कदाऽपि रघुवंशकेतोः कर्णान्तम् एष्यसि, तदा मम दौरस्थ्यम् देवे निवेदय यत् धर्मश्रिता असि अतः ते किल ब्रवीमि ॥ १३३ ॥

हे ज्यावल्लि ! यानी हे चाप की डोरीरूपलते ! तू किसी कारण के वश से यानी अधीनत्व से किसी समय में रघुकुल के ध्वज के यानी श्रीरामजी के कान के समीप जाओगी तो मेरा दौरवस्थ्य यानी खराप परिस्थिति देव यानी श्रीरामजी के पास में निवेदित करो क्योंकि तुम धर्म का आश्रयण करने वाली हो. इस हेतु से तुझे कहता हूँ ॥ १३३ ॥

कृत्वा स्थावरतावहानि कतिचित् पापानिपापप्रियो
नाभूवं सरयूतटे तृणमपि प्रागेव कस्मादहम् ।

Nepal Sanskrit ... Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

यत् तत्रत्य चराचरेभ्य इव मे देवःस्मराविष्कृत
स्वर्गस्त्रैणनिसर्गकेलिमधुरान्सांतानिकान् दापयेत् ।१३४।

पापप्रियः अहम् प्रागेव स्थावरतावहानि कति चित् पापानि कृत्वा सरयूतटे तृणम् अपि कस्मात् न अभूवम् यत् देवः तत्र-त्यचराचरेभ्यः इव मे स्मराऽऽविष्कृत स्वर्गस्त्रैण निसर्ग केलि मधुरान् सांतानिकान् दापयेत् ॥ १३४ ॥

पापप्रिय में पहले ही से स्थावरत्व के प्रापक स्थावर योनि मिलने वाले कितने ही पापों को कर सरयूनदी के तट पर घास भी क्यों नहीं हुआ जिससे कीटादि तृण-पतंग सबको मुक्ति देने वाले देव सर्वेश्वर श्रीरामजी कामदेव से प्रकटीकृत स्वर्गाङ्गनासमूह की स्वाभाविक क्रीड़ा से सुन्दर यानी सुशोभित सांतानिक लोक को तो दिला देते ॥ १३४ ॥

हिन्दोलभूषणमकृत्रिमवाक् तरुण्या
मन्दोदरीमदनकेलिसमापनास्त्रम् ।
केलीसखं जनकराजकिशोरिकाया
नालीककार्मुकधरं नरमाश्रयामः ॥१३५॥

अकृत्रिमवाक्तरुण्याः हिन्दोलभुषणाम् मन्दोदरी मदनकेलि-समापनास्त्रम् जनकराजकिशोरिकायाः केलीसखम् नालीककार्मुक-धरम् नरम् आश्रयामः ॥ १३५ ॥

स्वाभाविक वाणी रूप युवति के हिंडोले के अलंकार तथा मन्दोदरी की कामदेव क्रीडा की समाप्ति के अस्त्र और

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

जनकराज की किशोरी के यानी श्रीसीताजी के केलीसखा यानी क्रीडा मित्र बाण चाप धारक मनुष्य शरीरधारी सर्वेश्वर श्रीरामजी के हम प्रपन्न होते हैं अर्थात् श्रीरामजी की शरणागति स्वीकार करते हैं ॥ १३५ ॥

चेतः शतक्रतुमुखेषु मखाशनेषु
तिष्ठत्सु निष्ठुरपुराणतपोबलेन ।
उत्कण्ठतेऽद्य दशकण्ठमदद्विपेन्द्र-
कण्ठीरवं कमपि वीरमुपासितुं नः ॥१३६॥

नः चेतः मखाशनेषु शतक्रतुमुखेषु तिष्ठत्सु अद्य पुराणतपोबलेन दशकण्ठमदद्विपेन्द्र कण्ठीरवम् कम् अपि वीरम् उपासितुम् उत्कण्ठते ॥ १३६ ॥

हमारा मन यज्ञ के भाग भोक्ता इन्द्रादि देवों के रहते हुए भी आज पुरातन तपस्या के बल से रावण रूप मदशाली गजराज के विदारण में सिंह रूप किसी वीर श्रीरामजी की उपासना करने के लिये उत्कण्ठित होता है ॥ १३६ ॥

प्राचीनप्रभवशतार्जितैस्तपोभिः
प्रोन्मीलत्कुतुकतरङ्गमन्तरङ्गम् ।
दिष्ट्या मे दिनकरवंशदीपमेकं
कोदण्डाभरणमुपैति कोसलेन्द्रम् ॥१३७॥

प्राचीन प्रभवशतार्जितैः तपोभिः प्रोन्मीलत्कुतुकतरङ्गम् मे अन्तः दिष्ट्या अङ्गम् दिनकरवंशदीपम् कोदण्डाभरणम् कोसलेन्द्रम् उपैति ॥ १३७ ॥

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

पूर्व कालिक सैकडों जन्मों से संचित तपस्याओं से प्रकट होते हुए कुतूहलों के तरङ्ग यानी लहरवाला मेरा मन भाग्य से अयत्न प्रिय एक सूर्य कुल के दीप चाप रूप अलंकार वाले कोसलेन्द्र के यानी कोसलदेश के राजा श्रीरामजी के प्रति जाता है ॥ १३७ ॥

कारुण्यामृतपरिवाहभागपाङ्गं
वैदेहीस्तनघनसारवासिताङ्गम् ।
नाराचक्षपितनदीश्वरावलेपं
ध्यायामः कमपि करात्तबाणचापम् ॥१३८॥

कारुण्यामृतपरिवाहभागपाङ्गम् वैदेहीस्तन घनसारवासिताङ्गम् नाराचक्षपितनदीश्वरावलेपम् करात्तबाणचापम् कम् अपि ध्यायामः ॥ १३८ ॥

दयामृत प्रताप वाली दृष्टि वाले श्रीजानकी के स्तन के कर्पूर से सुगन्धित अङ्ग वाले बाण से समुद्र के गर्व को दूर करने वाले हाथों से शर और धनुष का धारण करनेवाले किसी विलक्षण पुरुष का ध्यान हम किया करते हैं ॥१३८॥

लङ्केशद्विरदमृगाधिपोगुणानां
सङ्केतस्थलमवनीसुतासहायः ।
निर्वेलप्रसृतदयोऽस्तु मे शरण्यः ।
सर्वेषामपि जगतां स कश्चिदीशः ॥१३९॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

अन्वयः-(यः) लङ्केशद्विरदमृगाधिराजः गुणानाम् सङ्केतस्थलम् अवनीसुतासहायः निर्वेलप्रसृतदयः सर्वेषाम् अपि जगताम् कश्चित् ईशः मे शरण्यः अस्तु ॥ १३९ ॥

जो रावण रूप हाथी के विदारण में सिंह गुणों के सङ्केतस्थल सर्व गुणाधार श्रीसीता सहाय तटको निष्क्रान्त कर चुकने वाली फैली हुई दया के समुद्र वाले सभी भुवनों के स्वामी कोई विलक्षण ईश्वर मेरे शरण्य यानी रक्षक में भी रक्षक हों ॥ १३९ ॥

अशनिपरुषघोषा जीवितं हर्तुकामा
यमभटजनपङ्क्तिर्यावदायाति भीमा ।
मरतकमणिनीले मैथिलीकेलिलोले
महिमनि मम तावन्मग्नमस्त्वन्तरङ्गम् ॥१४०॥

अन्वय–अशनिपरुषघोषा जीवितं हर्तुकामा भीमा यमभटजनपङ्क्ति यावत् आयाति, तावत् मम अन्तरङ्गम् मरतकमणिनीले मैथिलीकेलिलोले महिमनि मग्नम् अस्तु ॥ १४० ॥

वज्र के समान कठोर शब्द वाली जीवन को यानी प्राण को हरने की इच्छा वाली भयानक यमराज के सैनिकों की पङ्क्ति समूह जब तक आती है, तब तक मरतकमणि के समान श्याम वर्ण श्रीसीताजी के साथ क्रीडा में चञ्चल महिमा वाले श्रीराम चरणों में मेरा अन्तः करण मग्न हो ॥ १४० ।

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

देहावसानसमये दययारघुणां
वीरः कराम्बुजविराजदभीतिमुद्रः ।
आरुह्य पुष्पकमलङ्कृतवामभागो
देव्या विदेहसुतया मम संनिधत्ताम् ॥१४१॥

अन्वय–देहावसानसमये रघूणाम् दयया कराम्बुजविराजदभीतिमुद्रः वीरः विदेहसुतया देव्या अलङ्कृतवामभागः पुष्पकम् आरुह्य मम संनिधत्ताम् ॥ १४१ ॥

शरीर के अवसान के यानी छोडने के समय में रघुकुल दीप श्रीरामजी की कृपा से हाथ रूप कमल में विराजमान अभय मुद्रावाले श्रीसीतादेवी से सुशोभित वाम भाग वाले वीर श्रीरामजी पुष्पक विमान पर चढकर मेरे संनिहित यानी समीपवर्ती हों ॥ १४१ ॥

सुरैः प्रथमतः स्तुता तदनुयोगिभिर्भाविता
ततः प्लवगभल्लुकैर्जयजयेति संभाविता ।
जगत्त्रितयनायिका जनकराजकन्यान्विता
मदीयकुलदेवता वसति रत्नसिंहासने ॥१४२॥

अन्वयः– प्रथमतः सुरैः स्तुता तदनु योगिभिः भाविता ततः प्लवगभल्लुकैः जय जय इति संभाविता, जगत्त्रितयनायिका जनकराजकन्याऽन्विता मदीयकुलदेवता रत्नसिंहासने वसति ॥१४२॥

पहले देवों से स्तुत हुई उसके बाद योगाभ्यासियों से भावित हृदय में मननचिन्तित हुई उसके बाद वानर और भालुओं

Nepal ... Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

से जय जय इस शब्द से अच्छी तरह भावित हुई स्तुत त्रिलोकी की स्वामिनी श्रीसीताजी से युक्त मेरे कुल की देवता श्रीरामरूपा रत्नजडित सिंहासन पर वसते यानी विराजते हैं ॥१४२॥

आश्चर्यं न किमनवेक्ष्य लोकपाला-
नुल्लङ्घ्यद्रुहिणमुपेक्ष्य चन्द्रचूडम्।
अस्माभिः सविनयमञ्जलिः कृतोऽयं
पादाब्जं भजति पयोधिबन्धनस्य ॥१४३॥

अन्वयः—किम् आश्चर्यम् न ? लोकपालान् अनवेक्ष्य द्रुहिणम् उल्लङ्घ्य चन्द्रचूडम् उपेक्ष्य अस्माभिः पयोधिबन्धनस्य पादाब्जम् भजति अयम् अञ्जलिः सविनयम् कृतः ॥१४३॥

क्या आश्चर्य नहीं है ? कि लोकपालों की अनवेक्ष्या कर ब्रह्मा का उल्लंघन कर शिवजी की उपेक्षा कर हमने समुद्र का बन्धन करनेवाले श्रीरामजी के चरणकमल की सेवा करते हुए विनय पूर्वक इस प्रकार साञ्जलि नमन किया ॥१४३॥

श्रीकण्ठायुधशिथिलीकृतिप्रवीणो
निःशेषीकृतभृगुनन्दनावलेपः ।
स्रोतस्विन्यधिपतिसूचितप्रतापो
देवो मे दशमुखशासनः शरण्यः ॥१४४॥

Nepal Sanskrit University, Valmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

अन्वयः श्रीकण्ठायुधशिथिलीकृतिप्रवीणः निःशेषीकृतभृगुनन्दनावलेपः स्रोतस्विन्यधिपतिसूचितप्रतापः दशमुखशासनः देवः मे शरण्यः । १४४॥

दस हजार शिवजी के प्रताप को शिथिल करने में निपुण तथा भृगुनन्दन के अहंकार का समाप्त करने वाले समुद्र को अपने प्रताप सुचित करनेवाले रावण के शासक देव श्री रामजी मेरे शरण्य यानी रक्षको में भी अच्छे रक्षक हैं ॥१४४॥

सुत्रामप्रमुखसुपर्ववन्धलीलं
भल्लूकप्लवगपरिष्कृताङ्घ्रिमूलम् ।
वैदेहीवलयपदाङ्कशोभितांसं
चेतो मे स्मरति चिरन्तनं पुमांसम् ॥१४५॥

अन्वयः मे चेतः सुत्रामप्रमुखसुपर्ववन्धलीलम् भल्लूकप्लवगपरिष्कृताङ्घ्रिमूलम् वैदेहीवलयपदाङ्कशोभितांसम् चिरन्तनम् पुमांसम् स्मरति ॥१४५॥

मेरा मन इन्द्रादिदेवों से वन्दनीयलीला वाले भालू और वानरों से सेवित चरण कमल वाले श्रींसीताजी के मणिस्न्ध स्थल के चिन्ह से भूषितस्कन्धवाले दीर्घकालिक अनादिकालिक पुरातन पुरुषश्रीरामजी का स्मरण करता हैं ॥१४५॥

संक्रन्दनस्यन्दनभूषणानां
नाराचधारादितरावणानाम् ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

वमानिकाश्चर्यरणक्रमाणा–
मध्येमि केषामपि विक्रमाणाम् ॥१४६॥

अन्वय–संक्रन्दनस्यन्दनभूषणानाम् नाराचधाराऽर्दित रावणोनाम् वैमानिकाश्चर्यरणक्रमाणाम् केषाम् अपि विक्रमाणाम् अध्येमि ॥१४६॥

इन्द्र के रथ के भूषण तथा बाणों की धारा से रावण को पीडितकरनेवाले अर्थात् पारने वाले विमानचारी देवो का आश्चर्यजनक युद्धक्रम यानी लड़ाई की शैली वाले किसी विक्रमी पराक्रमी का स्मरण मैं किया करता हूँ ॥१४६॥

आम्नायमौलिमणिमब्जभवादिवन्द्यं
नाम्ना विभूषितनगेन्द्रसुतामुखेन्दुम् ।
द्वैधी कृतेशधनुषं पुरुषं तमेकं
नाथं विधाय हृदयं मम नानटीति ॥१४७॥

अन्वयः- मम हृदयम् आम्नायमौलिमणिम् अब्जभवादिवन्द्यम् नाम्ना विभूषितनगेन्द्रसुतामुखेन्दुम् द्वैधीकृतेशधनुषं पुरुषम् नाथम् विधाय नानटीति ॥१४७॥

मेरा हृदय वेद के मस्तकमणि ब्रह्मादि देवें के (से) वन्दनीय तथा अपने नाम से पार्वतीजी के मुखरूपचन्द्र को सुशोभित करनेवाले और शिवजी के चाप का खण्डित करनेवाले उन प्रधान पुरुष श्री रामजी को स्वामी बना कर अतिशय नाच रहा हैं यानी बहुत खुस हो रहा है ॥१४७॥

Nepal Sanskrit University, Dang

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

सुग्रीवाङ्गदजाम्बवद्धनुमतां सूक्ष्मेक्षिकालक्षितं
श्रुत्वा मन्त्रमन्यतनन्त्रहृदये श्च्योतद्दयोर्मीमये ।
दर्पान्धं दशकन्धरं विजहतस्तद् भ्रातुरभ्यागमं
सार्थीकुर्वति निर्वृतिं भजति मे स्वान्तं कवन्धान्तके ॥१४८॥

अन्वयः— सुग्रीवाङ्गदजाम्बवद्धनुमताम् सूक्ष्मेक्षिकालक्षितम् मन्त्रम् श्रुत्वा मन्त्रमनन्यतन्त्रहृदये श्च्योतद्दयोर्मीमिये दर्पान्धं दशक-न्धरम् विजहतः तद्भ्रातुः अभ्यागमम् सार्थीकुर्वति कवन्धान्तके मे स्वान्तम् निर्वृतिम् भजति ॥१४८॥

सुग्रीव अङ्गद जाम्बवान् और हनुमान्जी की सूक्ष्मदृष्टि से लक्षित यानी विचारित मन्त्र यानी गुप्तभाषण सुनकर स्वतन्त्र हृदय वाले दया से क्षरित होती हुई दयारूप उर्मी यानी तरङ्गवाले अहंकार से अन्धे रावण को छोडकर उसके भाई विभीषण का अभिमुख आगमन सफल करनेवाले अर्थात् विभीषणजी को अभय-दान देकर शरण में रखनेवाले तथा कवन्धराक्षस को मारनेवाले श्रीरामजी के चरणों में मेरा मन शान्ति प्राप्त कर रहा है ॥१४८

पारावारतटे धनुःशरपरिष्कारागहस्ताम्बुजं
नम्रस्याशरनायकानुजनुषो नाथीभव द्याचतः ।
मेघश्यामलकान्तिमेदुरकृपा मेदस्विनेत्राञ्चलं
किञ्चिद्वस्तु निवरतुमस्तु हृदि मे कीशाच्छभल्लावृतम् ॥

समुद्र के तीर पर चाप और वाण के संभालने में आगे किये गये हाथ रूप कमल वाले नम्र नाथ यानी अधिपति होते हुये

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

भी याचा करनेवाले राक्षसों के अधिपति रावण के छोटे भाई विभीषण के ऊपर मेघसमानश्यामवर्ण चीकने दयारूपमेघसे युक्त नयन रूप अञ्चलवाले वन्दर तथा भालु रूप अच्छे मल्लो से वेष्टित कोई विलक्षण चीज मेरे हृदय में निवास करने के लिए रहे अर्थात् सर्वदा निवास करे ॥१४९॥

उत्सृज्याग्रजमुग्रजल्पितमपि क्रव्यादभव्याधिपं
संप्राप्तेन विभीषणेन सचिवैः सार्धं स्थितेनाम्बरे ।
दीनत्राणधुरीण? देव?करुणा देया मयोत्यर्थितं
भक्तास्मो हृदिराघवं परिवृतं भल्लूकशाखामृगैः ॥१५०

अन्वयः-उग्रजल्पतम अपि क्रव्यादभव्याधिपम् अग्रजम् उत्सृज्य सचिवैः सार्धम् अम्बरेस्थितेन संप्राप्तेन विभीषणेन दीनत्राणधुरीण देव मयि करुणा देया इत्यर्थितम् भल्लूकशाखामृगैः परिवृतम् राघवं-हृदि भक्तास्मः ॥१५०॥

उग्र यानी उद्दण्ड भाषित वोलने वाले राक्षसराज वडे भाई रावण को छोड़कर मन्त्रियों के साथ आकाश में स्थित शरण में संप्राप्त विभीषण से हे गरीवों की रक्षा में धुरीण यानी अग्रेसर देव श्रीरामजी! मुझ पर दया दृष्टि देनी चाहिये इस प्रकार से प्रार्थित हुए भालु और वन्दरों से वेष्टित हुए श्रीरामजी की हम हृदय में सेवा किया करेगें ॥१५०॥

सुग्रीवागतमेनमानय दशग्रीवानुजं वादश
ग्रीवं वा प्लवगेन्द्र किं गणनया दत्तं मयाऽस्याभयम् ।

Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

इत्यामन्त्र्य विभिषणाय ददतो लङ्काधिपत्यं प्रभो
र्ध्यायामः प्रतिपन्नसंनतदयादीक्षान् कटाक्षाङ्कुरान् ॥१५१॥

अन्वयः—[illegible] सुग्रीव? एनम् दशग्रीवम् वानुजम् वा आनय गणनया किम्? अस्य मया अभयम् दत्तम् इति आमन्त्र्य विभीषणाय लङ्काधिपत्यम् ददतः प्रभोः प्रतिपन्नसंनतदयादीक्षान् कटाक्षाङ्कुरान् ध्यायामः ॥१५१।

हे वन्दरों के अधिप ! सुग्रीव! इसे रावण के छोटे भाई विभीष को अथवा रावण ही क्यों न हो उस को मेरे पास ले आओ इसकी दोष और गुण की गणना से क्या ? इसको मैंने अभय दे दिया है, इस प्रकार उदार वचन से उसे बुलाकर विभीषण को लङ्का का राज्य देने वाले प्रभु श्रीरामजी के शरणागत संनत यानी विनम्रता में दया के प्रारम्भक दयादृष्टि के अकुरों को यानी प्रादुर्भावों को हम ध्यान किया करते है ॥१५१॥

दर्भान्तरन्यस्तशरीरभारं
सिन्धोः प्रसादाय रघुप्रवीरम् ।
मदव्यपेतं महति प्रतापे
ऽप्यन्वेति नन्वेष ममान्तरात्मा ॥१५२॥

अन्वयः—सिन्धोः प्रसादाय दर्भान्तरन्यस्तशरीरभारम् महति प्रतापेऽपि मदव्यपेतम् रघुप्रवीरम् मम एष अन्तरात्मा ननु अन्वेति ।१५२॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

समुद्र को प्रसन्न करने के लिये कुशों के मध्य में शरीर का भार रखने वाले यानी कुशके आसनमें विराजमान वडे प्रतापके रहने परभी अभिमान से रहित श्रीरामजी की ओर मेरी यह अन्तरात्मा नियत रूपसे–सर्वदा अनुगमन कर रही है ॥१५२॥

दानोत्कर्षक्षममुपधद्दक्षिणं बाहुदण्डं
दीर्घीकुर्वन्नितरमसितज्याकिणाङ्कप्रकोष्ठम् ।
प्रान्ते कृत्वा धनुरिषुमपि प्राप्तुमब्धेः प्रासादं
देवो दर्भास्तरणशयितश्चित्तमुत्तम्भते नः ॥१५३॥

अन्वय–दानोत्कर्षक्षमम् दक्षिणं वाहुदण्डम् उपदधत् असितज्याकिणाङ्क प्रकोष्ठम् इतरम् दर्घीकुर्वन् अब्धेः प्रसादम् प्राप्तुम् धनुः इषुम् अपि प्रान्तेकृत्वा दर्भास्तरणशयितः देवः नः चित्तम् उत्तम्भते ॥१५३॥

दानके उत्कर्षमें समर्थ सर्वदा तैयार रहने वाला भुजरूप दण्ड का धारण करने वाले धनुष के काले डोरो के चिह्नयुक्त प्रकोष्ठवाले वामबाहु को वडे करते हुए यानी आगे फैलाते हुये समुद्र को प्रसन्न करने के लिए चाप और वाणों को समीप में रखकर कुश के विछौने पर सोए हुए देव रघुवंशभूष श्रीरामजी मेरे चित्तको उत्तब्ध यानी अवरुद्ध निश्चल कर रहे है ॥१५३॥

भक्तिप्रह्वविभीषणार्पितकरन्यस्तैकहस्ताम्बुजः
सुग्रीवेण पुरो निवारितजनः सौमित्रिणाऽनुद्रुतः ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

(पृ. १६ काशेषांक)

खण्डश नहीं कर सकते है, किन्तु एकरस सदा ही एक रूप रहता है, और जैसे भगवान किशोरावस्था में स्थित है वैसे ही आत्मा को भी किशोरावस्था सम्पन्न माना है, भक्तों के भावानुकूल भिन्न अवस्था युक्त होने पर भी श्रीहनुमानजी के सिद्धान्त में केवल भगवान के समान किशोरावस्था में ही स्थित बतलाया गया, जैसे भगवान श्रीरामजी द्विभुज हैं वैसेही आत्माभी द्विभुजहै जैसे शुद्धसत्व सम्पन्न भगवान विग्रह माना गया है वैसे ही आत्मा भी शुद्धसत्व सम्पन्नमाना जाता है, और अपने सेव्य उपाय देव श्री रामजी की सेवा ही इसका एक मात्र प्रयोजन है दूसरा कुछ नहीं, और प्रभु श्रीरामजी का यह नियाम्य है, अर्थात् जैसे वे प्रेरणा करते हैं वैसे ही यह रहता है तथा प्रभू का शेष है जैसे चन्दन कुसुम वस्त्रादि जैसी इच्छा हो उस तरह उसका उपभोग कर सकते हैं, अर्थात् चन्दन को जहाँ चाहे तहाँ लगवैं माला वस्त्रादि को जैसे चाहे तैसा पहिरे।

उसका विनियोग भोक्ता की इच्छानुकूल है भोग्य वस्तु अपने से कुछ नहीं कह सकता है, इसी तरह जीवात्मा श्रीरामजी का शेष है, उनकी इच्छा के अधीन है इसकी स्वरूप सत्ता स्थिति प्रवृत्ति सदा ईश्वराधीन है इस तरह अपने रूप को जानना चाहिये, यह प्राप्ता का स्वरूप निर्णय है ॥२॥ अब प्राप्ति के उपाय के स्वरूप को श्री हनुमानजी कहते हैं।

सर्वभूतदया चैव सर्वत्र समदर्शनम् !
अन्यत्रा निन्दनं चैव स्वेशे स्नेहाधिकं तथा ॥१०॥

क्रमश:

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

Rcgd. N. GAMC 451

श्री सीताराम नाम संकीर्तन

महायज्ञ

—: कलौ केशव कीर्त्तनात् :—

नामु सप्रेम जपत अनयासा । भगत होहिं मुद मंगल बासा ।।

सज्जनों ! स्थान मटिहानी में सदा की भाँति इस वर्ष भी आश्विन शुक्ल प्रतिपद् से विजया दशमी तक के लिये श्री सीताराम नाम संकीर्त्तन महायज्ञ (नवाह) बड़ी धूम-धाम के साथ हो रहा है। इस महायज्ञ में सन्त समाज, छात्रगण, सरकारी कर्मचारी वर्ग तथा ग्रामीण जनता सानन्द भाग ले रहें हैं।

महायज्ञ का आयोजन प्रति वर्ष नेपाल राष्ट्र एवं हिन्दू धर्म के महान संरक्षक श्री ५ महाराजाधिराज वीरेन्द्र वीर विक्रमशाहदेव के कल्याण के लिये होता है। अतः आप लोगों से नम्र निवेदन है कि इस महायज्ञ में भाग लेकर अपने जीवन को सफल बनावे। आयोजक :-मान महंथ कौशल किशोर दास "वैष्णव" मटिहानी स्थान (नेपाल तराई) पो० सुरसंड जि० मुजफ्फरपुर (बिहार)

मुद्रकः-श्रीरामानन्द प्रिंटिंग प्रेस, कांकरिया रोड, अहमदाबाद-२२
त्रिदण्डि संस्थान श्रीशेषमठ-धर्मप्रचार विभागसे धर्मप्रचार्य प्रकाशित

प्रेषक-श्री कोसलेन्द्र मठ सरखेज रोड
पो०पालडी, अहमदाबाद-३८०००७

नं. १५८- पुस्तकालय

प्रति श्री बाल्मीकि अध्ययन संस्थान
काठमाण्डु(नेपाल)

... University, Valmeeki Campus, Kathmandu